दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

सुरक्षित तिथि: 06.04.2026
उदघोषित तिथि: 21.04.2026

<u>अव.वा.(आप.) 3/2025 & आप.वि.अ . 1909/2026,आप.वि.अ . 2184/2026, आप.वि.अ. 5815/2026, आप.वि.अ .9152/2026</u>

<u>CONT.CAS.(CRL) 3/2025 & CRL.M.A. 1909/2026, CRL.M.A. 2184/2026, CRL.M.A. 5815/2026, CRL.M.A. 9152/2026</u>

न्यायालय स्वयं के समावेदन पर ....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री हर्ष प्रभाकर, अधिवक्ता (न्यायमित्र) सह श्री ध्रुव चौधरी, श्रीशुभम सौरव और श्री विजित सिंह, अधिवक्तागण श्री विवेक कुमार टंडन एवं सुश्री लक्ष्मी गुप्ता, अधिवक्तागण

बनाम

शिव नारायण शर्मा अधिवक्ता और अन्य

द्वारा: श्री सचिन पुरी और श्री संजीव सागर, वरिष्ठ अधिवक्तागण सह सुश्री महक घलोथ, श्री अभिषेक सिंह, श्री अनिल ध्यानी, सुश्री आशना भोला, सुश्री विदुषी श्रीवास्तव, प्र.-1 के अधिवक्तागण
श्री गुलशन पाहुजा व्यक्तिगत रूप से

श्री अमन उस्मान, अति.लो.अभि. सह श्री मानवेन्द्र यादव एवं श्री अतीक उर रहमान, राज्य के लिए अधिवक्तागण

<u>अव.वा.(आप.) 4/2025</u>

<u>CONT.CAS.(CRL) 4/2025</u>

न्यायालय स्वयं के समावेदन पर

द्वारा: श्री हर्षप्रभाकर,अधिवक्ता(न्यायमित्र) सह श्री ध्रुव चौधरी, श्री शुभम सौरव और श्री विजित सिंह, अधिवक्तागण
श्री विवेक कुमार टंडन एवं सुश्री लक्ष्मी गुप्ता, अधिवक्तागण (डीएचसीएलएससी)

बनाम

दीपक सिंह, अधिवक्ता और अन्य

द्वारा: श्री सचिन पुरी और श्री संजीव सागर, वरिष्ठ अधिवक्तागण सह सुश्री महक घलोथ, श्री अभिषेक सिंह, श्री अनिल ध्यानी, सुश्री आशना भोला, सुश्री विदुषी श्रीवास्तव, प्र.-1 के अधिवक्तागण।
श्री गुलशन पाहुजा व्यक्तिगत रूप से

श्री अमन उस्मान, अति.लो.अभि. सह श्री मानवेन्द्र यादव एवं श्री अतीक उर रहमान, राज्य के लिए अधिवक्तागण

कोरम:
माननीय न्यायमूर्ति श्री नवीन चावला
माननीय न्यायमूर्ति श्री रविन्द्र डुडेजा

निर्णय

न्या. नवीन चावला

1. यह अवमानना याचिकाएँ दिनांक 15.01.2025 को सुश्री चारु असिवाल, विद्वान एसीजे/सीसीजे-एसीआर, शाहदरा, कड़कड़डूमा न्यायालय, दिल्ली द्वारा संबोधित संदर्भ तथा दिनांक 10.03.2025 को श्री अजय सिंह परिहार, विद्वान एसीजे-सीसीजे-एआरसी, उत्तर, रोहिणी न्यायालय द्वारा संबोधित संदर्भ पर दर्ज की गई हैं। इन संदर्भों में विवादित वीडियो और बैनरों (दिनांक 29.10.2024 और 05.01.2025, जो अवमानना मामला (आप।) 3/2025 से संबंधित हैं, तथा दिनांक 03.03.2025 और 07.03.2025, जो अवमानना मामला (आप.) 4/2025 से संबंधित हैं) के बारे में शिकायत की गई है, जिन्हें श्री गुलशन पाहुजा, जो दोनों याचिकाओं में प्रत्यर्थी संख्या 2 हैं, ने अपने यूट्यूब चैनल "फाइट फॉर जूडिशियल रिफॉर्मस" पर अपलोड किया है।

अव.वा.(आप.) 3/2025 :
CONT. CAS. (CRL) 3/2025:

2. दिनांक 29.10.2024 को अपलोड किए गए यूट्यूब वीडियो में, प्रत्यर्थी संख्या 2 ने श्री शिव नारायण शर्मा, अधिवक्ता (जो उक्त अवमानना मामले में प्रत्यर्थी संख्या 1 हैं) का साक्षात्कार लिया है, और उसकी भूमिका ही साक्षात्कार की प्रकृति को स्पष्ट करती है। उसका फोटो ट्रांसक्रिप्ट इस प्रकार है:-

3. उक्त साक्षात्कार मुख्य रूप से न्यायालय की कार्यवाही की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग की मांग पर केंद्रित है और इसमें दो मामलों पर चर्चा की गई

है, जिनका कथित रूप से उपरोक्त न्यायिक अधिकारियों द्वारा निपटारा किया गया था।

4. साक्षात्कार के दौरान, प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री शिव नारायण शर्मा ने दो मामलों; एक मामला सुश्री चारु असिवाल के न्यायालय में और दूसरा मामला श्री अजय नरवाल के न्यायालय में अपने कथित अनुभव का विवरण दिया | हालांकि, साक्षात्कार के दौरान प्रत्यर्थी संख्या 1 ने न्यायिक अधिकारियों और संपूर्ण न्यायिक संस्था के विरुद्ध कुछ आपत्तिजनक और अपमानजनक टिप्पणियाँ कीं। हम उन टिप्पणियों का पूरा विवरण नहीं दे रहे हैं क्योंकि प्रतिवादी संख्या 1 श्री शिव नारायण शर्मा ने दिनांक 19.08.2025 को अपना उत्तर दाखिल कर दिया है, जिसमें उन्होंने इसके लिए बिना शर्त और पूर्ण रूप से क्षमा याचना की है। वे हमारे समक्ष व्यक्तिगत रूप से भी उपस्थित हुए और अपनी क्षमा याचना दोहराते हुए यह आश्वासन दिया कि भविष्य में ऐसी अपमानजनक और विवादास्पद टिप्पणियाँ नहीं करेंगे। हमें उनकी क्षमा याचना वास्तविक प्रतीत होती है और इसलिए हम इसे स्वीकार करते हैं। इसी कारणवश हम कार्यवाही को समाप्त करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री शिव नारायण शर्मा को अवमानना वा. (आप.) 3/2025 से मुक्त करते हैं।

5. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने, हालांकि, अपने कार्यों को उचित ठहराना जारी रखा है और इसलिए हम उसके विरुद्ध दोनों अवमानना मामलों पर आगे विचार करेंगे।

6. जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दिनांक 15.01.2025 के संदर्भ में, सुश्री चारु असिवाल ने प्रत्यर्थी संख्या 2 श्री पाहुजा द्वारा 05.01.2025 को उनके यूट्यूब चैनल चैनल " फाइट फॉर जूडिशियल रिफॉर्मस" पर अपलोड किए गए दूसरे वीडियो का भी उल्लेख किया है। उक्त वीडियो एक बैनर से प्रारंभ होता है, जो इस प्रकार है:-

7. उक्त वीडियो में, संक्षिप्त भूमिका के बाद प्रत्यर्थी संख्या 2, बिना किसी का नाम लिए, कुछ न्यायाधीशों के कार्य न करने या भ्रष्ट होने की शिकायत करता है। इसके पश्चात, प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री शिव नारायण शर्मा का संपूर्ण

साक्षात्कार, जैसा कि वीडियो संख्या 1 दिनांक 29.10.2024 में था और जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, दिखाई देता है।

8. सुश्री असिवाल ने अपने दिनांक 15.01.2025 के संदर्भ में कहा है कि दूसरा वीडियो प्रत्यर्थी संख्या 2 ने केवल इसलिए पोस्ट किया क्योंकि पहले वीडियो को अधिक दर्शक नहीं मिले थे और प्रत्यर्थी संख्या 2 इसे अधिक सनसनीखेज बनाना चाहता था, जिसके लिए उसने वीडियो की शुरुआत में बैनर जोड़ा, जैसा कि ऊपर पुनरुत्पादित किया गया है। उसका उद्देश्य पूरा हो गया क्योंकि लगभग तुरंत ही वीडियो ने ध्यान आकर्षित करना शुरू कर दिया और लगभग 13,000 दर्शक मिले, जिसके कारण उन्हें दिनांक 11.10.2024 को संयुक्त पुलिस आयुक्त, IFSO/विशेष प्रकोष्ठ, दिल्ली पुलिस को शिकायत लिखनी पड़ी।

9. प्रारंभ में हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि जहाँ तक प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा न्यायालय की कार्यवाही की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग के लिए चलाए गए अभियान का प्रश्न है, उसमें कोई आपत्ति नहीं हो सकती, विशेषकर अवमानना अधिकार क्षेत्र में तो बिल्कुल नहीं, क्योंकि यह अभियान एक विषय पर है जिस विषय पर उनका विश्वास है कि इससे न्याय वितरण प्रणाली में सुधार होगा। हमें प्रारंभ में ही यह जोर देना होगा कि अवमानना अधिकार क्षेत्र का प्रयोग इस अभियान का विरोध करने के लिए नहीं किया जा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह न्याय वितरण प्रणाली में सुधार के तरीकों पर अपनी राय रखे और उसे व्यक्त करे।हालाँकि, हमारे विचार में, दो विशिष्ट न्यायिक

अधिकारियों का नाम लेना और जिस प्रकार से वीडियो के बैनर में ऐसा किया गया है, उसका उद्देश्य न्यायालय की कार्यवाही की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग के अभियान को आगे बढ़ाना नहीं है, बल्कि सनसनीखेज माहौल बनाना और उन दोनों नामित न्यायिक अधिकारियों के प्रति अविश्वास पैदा करना है, जिससे उनकी प्रतिष्ठा और अधिकार कमज़ोर होते हैं।

<u>अव.वा.(आप.) 4/2025:</u>
<u>CONT. CAS. (CRL) 4/2025:</u>

10. जहाँ तक अवमानना वाद (आप.) 4/2025 का संबंध है, प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दिनांक 03.03.2025 को अपलोड किया गया वीडियो एक बैनर से प्रारंभ होता है, जो इस प्रकार है:-

11. उक्त विडियो में प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री दीपक सिंह का साक्षात्कार शामिल है, जिसमें वे श्री अजय सिंह परिहार के न्यायालय (जो विद्युत न्यायालय का कार्यभार संभाल रहे थे) में एक मामले की कथित कार्यवाही का वर्णन करते हैं। इसमें श्री दीपक सिंह द्वारा न्यायालय के विरुद्ध कुछ अपमानजनक और विवादास्पद टिप्पणियाँ भी की गई हैं। हालाँकि, प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री दीपक सिंह ने दिनांक 19.08.2025 को एक उत्तर दाखिल किया है, जिसमें उन्होंने न्यायालय से बिना शर्त और पूर्ण क्षमा याचना की है। वे व्यक्तिगत रूप से भी उपस्थित हुए और अपनी क्षमा याचना दोहराई, जिसे न्यायालय ने वास्तविक माना। उन्होंने न्यायालय को यह आश्वासन दिया कि भविष्य में वे किसी भी न्यायिक अधिकारी या न्यायिक संस्था के विरुद्ध ऐसी अपमानजनक टिप्पणियाँ नहीं करेंगे। इसी कारणवश हम कार्यवाही को समाप्त करते हुए प्रत्यर्थी संख्या 1, श्री दीपक सिंह को इस संबंध में मुक्त करते हैं।

12. जहाँ तक पहले वीडियो का संबंध है, प्रत्यर्थी संख्या 2 पुनः यह दलील देता है कि इसे, उसके बैनर सहित सद्भावना से और जनहित में अपलोड किया गया है। हम इस दलील पर अपने निर्णय के बाद के भाग में विस्तार से विचार करेंगे।

13. जहाँ तक अवमानना वाद (आप.) 4/2025 का संबंध है, यह भी प्रत्यर्थी संख्या 2, श्री पाहुजा द्वारा दिनांक 07.03.2025 को अपलोड किए गए दूसरे वीडियो पर आधारित है। उक्त वीडियो एक बैनर से प्रारंभ होता है, जो इस प्रकार है:-

14. इसमें लगभग प्रारंभ में ही (00.00.22 सेकंड पर) एक अन्य बैनर भी शामिल है, जो इस प्रकार है:-

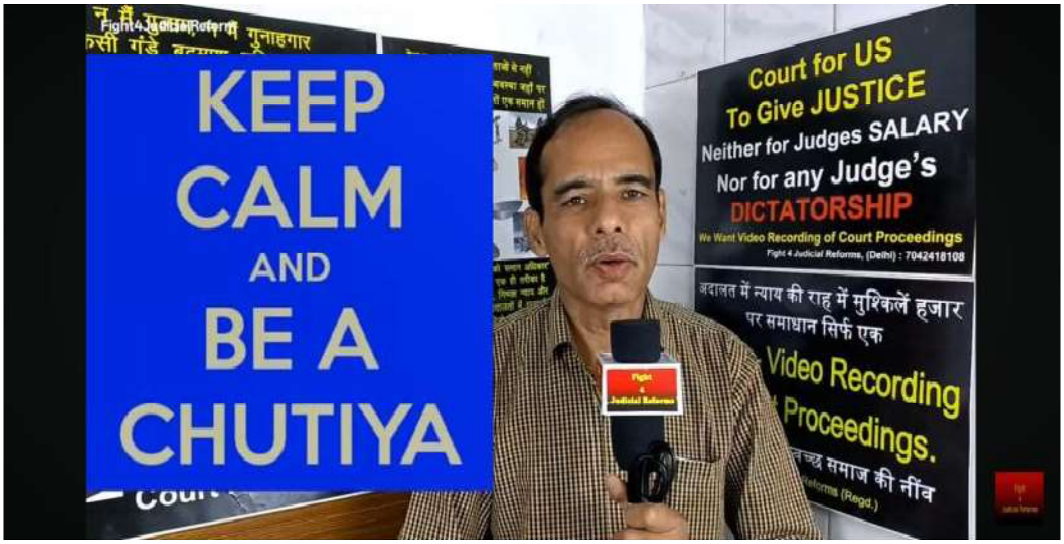

15. प्रत्यर्थी संख्या 2 उक्त वीडियो की शुरुआत इस प्रकार करता है:-

> *"नमस्कार, मैं दिल्ली से गुलशन पाहुजा, " फाइट फॉर जूडिशियल रिफॉर्मस" से। Capital 'C' (0.17 पर) –* ***'सुप्रीम कोर्ट और अदालतें कैसे Capital 'C' बनाती हैं।'***
>
> ***00:00:22 (स्क्रीन पर बैनर आता है)***
> *अभी जो रणवीर अल्लाहबादिया का मामला आया था समय रैना के साथ, जिसमें उसने शो के अंदर कई गलत बातें कहीं जो माफी के योग्य नहीं थीं। पर कैसे Capital 'C' बनाया जाता है, यह मामला एक अच्छा उदाहरण है।* ***(0.42 मिनट पर) – 'Capital 'C' शायद समझ गए होंगे आप कि मैं क्या कह रहा हूँ?'*** *अगर मैं कहूँ तो रणवीर अल्लाहबादिया और अपूर्वा अरोड़ा से पहले जिसने 'Hostage' नाम की कोई वेब सीरीज़ बनाई थी,* ***(0.55 मिनट पर) – 'उसको तो बख्श दिया, पर मुझे नहीं बख्शेंगे। उनको तो मौका चाहिए होता है दिखाने का कि हमने यह न्याय किया, कि समाज से हमने गंदगी साफ कर दी।"*** *हमने यह कर दिया, हमने वह कर दिया, पर करते क्या हैं – वह अलग बात है।' "Capital 'C' बनाया जाता है सलमान खान जैसे मामलों के अंदर।"*
>
> *xxxxxx*
>
> ***(3.27 मिनट पर) – "Capital 'C' शब्द याद रखिएगा मेरा। 'C' से बहुत सारे शब्द शुरू होते हैं। उन्हीं में से एक शब्द यह भी है। 'C' 'H' CH-A!"***
>
> *xxxxx*

> ***(7.09 मिनट पर) – "तो हमारे देश की अदालतों से आप यह समझें कि हमारे देश के अंदर अपराध को रोकथाम मिलेगी, कमी मिलेगी, कोई लाभ मिलेगा। मुझे तो नहीं लगता।*** *आपको लगता है तो आप अपनी खुशफहमी पालते रहिए।"*
>
> *xxxxxxx*
>
> *"दोष होता है सरकार के ऊपर कि सरकार गला घोट रही है।"* ***(10.34 मिनट पर) – "सुप्रीम कोर्ट कौन सा गला नहीं घोट रही?*** *कितने पत्र लिखकर देते हैं आप लोग? क्या पत्र का जवाब मिलता है आपको? यह भी गला घोटना ही है!"* ***(10.46 मिनट पर) – "इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि Capital 'C' ही बनाती है सुप्रीम कोर्ट भी।"*** *"कानून सबके लिए बराबर नहीं है हमारे देश के अंदर, सिर्फ लिखा हुआ है। अंबेडकर जी ने लिख दिया 'कानून बराबर है', पर क्या कानून सचमुच सबके लिए बराबर है?"*

16. यहाँ हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि हम प्रत्यर्थी के विरुद्ध उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दों के लिए कार्यवाही नहीं कर रहे हैं, बल्कि उसके उस उद्देश्य के लिए कर रहे हैं जो न केवल सर्वोच्च न्यायालय बल्कि संपूर्ण न्यायपालिका की प्रतिष्ठा को कलंकित करने और उसकी अधिकारिता को कम करने का है।

<u>इन संदर्भों मे कार्यवाहियाँ:</u>

17. आगे हमारे निर्णय पर विचार करने से पहले, हमें यह भी उल्लेख करना होगा कि हमने अपने आदेश दिनांक 26.02.2026 में दोनों मामलों के संबंधित प्रत्यर्थी संख्या 1, अर्थात् श्री शिव नारायण शर्मा और श्री दीपक सिंह

के बयान दर्ज किए थे, जिनमें उन्होंने कहा था कि उन्होंने अपने साक्षात्कार के वीडियो को अपलोड या प्रकाशित करने के लिए कोई सहमति या अनुमति नहीं दी थी और वे वीडियो में प्रयुक्त थंबनेल या पोस्टर/बैनरों से भी अनभिज्ञ थे। उन्होंने इस संबंध में शपथपत्र भी दाखिल किया था। हमने इन अवमानना मामलों में प्रत्यर्थी संख्या 2, श्री गुलशन पाहुजा को भी यह अवसर दिया था कि वे संबंधित प्रत्यर्थी संख्या 1 के इस रुख पर अपनी प्रतिक्रिया दें। जहाँ तक बैनरों का प्रश्न है, उन्होंने कहा कि प्रत्यर्थी संख्या 1 की उसमें कोई भूमिका नहीं थी। हम आदेश का प्रासंगिक अंश इस प्रकार पुनरुत्पादित करते हैं:-

> *"1. हमारे आदेश दिनांक 23.12.2025 के अनुसार, प्रत्यर्थी संख्या 1, अर्थात् श्री शिव नारायण शर्मा और श्री दीपक सिंह द्वारा दोनों उपरोक्त अवमानना मामलों में शपथपत्र दाखिल किए गए हैं, जिनमें उन्होंने कहा है कि उन्होंने प्रत्यर्थी संख्या 2 - श्री गुलशन पाहुजा को दिए गए अपने साक्षात्कार के वीडियो को अपलोड और प्रकाशित करने के लिए कोई सहमति या अनुमति नहीं दी थी। उन्होंने आगे कहा कि वे उन साक्षात्कारों में प्रयुक्त थंबनेल और पोस्टर के बारे में भी अनभिज्ञ थे और प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा ऐसे थंबनेल और पोस्टर जोड़ने के लिए उनसे कोई अनुमति/सहमति नहीं ली गई थी।*
>
> *2. हमारे आदेश दिनांक 19.01.2026 के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 2 को दिए गए अवसर के तहत, श्री गुलशन पाहुजा ने डायरी संख्या 71753 के अंतर्गत एक उत्तर दाखिल किया है। हालांकि, उस उत्तर में केवल यह कहा गया है कि चूँकि दोनों अवमानना मामलों में प्रतिवादी संख्या 1 ने उनके*

विरुद्ध कोई जांच की मांग नहीं की है, इसलिए वे इस संबंध में और कुछ कहना नहीं चाहते।

3. इस न्यायालय के एक विशिष्ट प्रश्न पर, दोनों उपरोक्त मुद्दों के उत्तर में – अर्थात् क्या दोनों अवमानना मामलों में प्रत्यर्थी संख्या 1 के साक्षात्कार के वीडियो उनकी अनुमति/सहमति से अपलोड किए गए थे और क्या दोनों अवमानना मामलों में प्रत्यर्थी संख्या 1 की थंबनेल और पोस्टर अपलोड करने में कोई भूमिका थी या क्या वे उनकी सहमति और जानकारी से अपलोड किए गए थे – श्री पाहुजा ने यह उत्तर दिया कि जब प्रत्यर्थी संख्या 1 संबंधित अवमानना मामलों में कैमरे के सामने साक्षात्कार दे रहे थे, तो वे भली-भाँति जानते थे कि वही वीडियो प्रत्यर्थी संख्या 2, श्री गुलशन पाहुजा द्वारा संचालित यूट्यूब चैनल पर अपलोड किया जाएगा।

4. <u>जहाँ तक थंबनेल और पोस्टर के अपलोड करने का प्रश्न है, उन्होंने स्वीकार किया कि संबंधित अवमानना मामलों में प्रत्यर्थी संख्या 1 की न तो इन्हें बनाने में कोई भूमिका थी और न ही इन्हें अपलोड करने में, तथा उनकी अनुमति/सहमति भी उनसे प्राप्त नहीं की गई थी।"</u>

(ज़ोर दिया गया)

18. इस न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 23.12.2025 द्वारा, दोनों मामलों में प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध निम्नलिखित आरोप तय किए थे, क्रमशः:-

"अव.वा.(आप.) 3/2025

XXXXX

10. इस समय, हम यह उचित समझते हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध लगाए गए आरोपों का संक्षेप में उल्लेख किया जाए, जो इस प्रकार हैं:-

i) आपने प्रत्यर्थी संख्या 1 श्री शिव नारायण शर्मा, अधिवक्ता का साक्षात्कार अपने यूट्यूब चैनल चैनल "फाइट फॉर जूडिशियल रिफॉर्मस" पर पहले दिनांक 29.10.2024 को और दिनांक 05.01.2025 को उसके साक्षात्कार के संशोधित वीडियो को प्रकाशित किया| उक्त साक्षात्कार का एक वीडियो, जो 05.01.2025 को अपलोड किया गया था, उसमें निम्नलिखित थंबनेल/शीर्षक/बैनर था:-

"क्या आपका मुकदमा
जज अजय नरवाल
जज चारु असिवाल
या इन जैसे जज की अदालत में है?
सिर तो न्याय की उम्मीद छोड़ ही दीजिए

xxxxx

अव.वा.(आप.) 4/2025

xxxxx

19. इस अवमानना याचिका के संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध आरोप/आक्षेप इस प्रकार हैं:-

(i) आपने अपने यूट्यूब चैनल "फाइट फॉर जूडिशियल रिफॉर्मस" पर दिनांक 03.03.2025 को एक वीडियो प्रकाशित किया जिसका बैनर/शीर्षक/थंबनेल इस प्रकार है:-

> *"दिल्ली की रोहिणी कोर्ट के जज अजय सिंह परिहार की अदालत में आपका मुकदमा है तो भगवान ही आपका मालिक है।"*

> *(ii) आपने अपने उक्त यूट्यूब चैनल पर दिनांक 07.03.2025 को दूसरा वीडियो प्रकाशित किया, जिसमें आपने बैनर तथा वीडियो दोनों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय और अन्य न्यायालयों के लिए अपमानजनक, तिरस्कारपूर्ण और अभद्र शब्दों का प्रयोग किया।*

19. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने, जैसा कि आदेश दिनांक 23.12.2025 में दर्ज किया गया है, अधिवक्ता की सहायता लेने से इंकार कर दिया था और व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होते रहे। उसी आदेश द्वारा, उनकी आवेदन संख्या आप.वि.अ. 28644/2025, जो अवमानना वा. (आप.) 3/2025 में दायर की गई थी और जिसमें वर्तमान अवमानना याचिका की न्यायालय कार्यवाही का ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग करने का अनुरोध किया गया था, उसे भी स्वीकार कर लिया गया। यह निर्देश दिया गया कि कोर्ट मास्टर यह सुनिश्चित करेगा कि आगे से इन मामलों की कार्यवाही Webex प्लेटफ़ॉर्म के माध्यम से रिकॉर्ड की जाए।

20. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने यह भी दावा किया कि वह अंग्रेज़ी भाषा में पारंगत नहीं है, और इसलिए दिनांक 19.01.2026 के आदेश द्वारा इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि उसकी सभी याचिकाएँ, जो हिंदी में दाखिल की

गई हैं, रजिस्ट्री द्वारा अभिलेख पर ली जाएँ। इसके अतिरिक्त, न्यायालय की कार्यवाही भी हिंदी भाषा में संचालित की गई। पारित आदेशों की अनुवादित प्रतियाँ भी उसे उपलब्ध कराई गईं।

21. श्री पाहुजा ने, विभिन्न आवेदनों को दाखिल करने के अतिरिक्त, जहाँ तक उन पर लगे आरोपों का संबंध है, दिनांक 04.12.2025 को ई-मेल द्वारा एक उत्तर दाखिल किया। उसमें उन्होंने कहा कि एक चिंतित नागरिक के रूप में उन्होंने वर्तमान न्यायिक व्यवस्था के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की, जो उनके अनुसार केवल व्यवस्थित सुधारों द्वारा ही सुधारी जा सकती है। उन्होंने कहा कि जब किसी अपराधी को उचित दंड नहीं दिया जाता, तो वह आगे अपराध करने के लिए प्रोत्साहित होता है। उन्होंने कहा कि उनका उद्देश्य सद्भावनापूर्ण था और उन्हें न्यायाधीशों की आलोचना करने से रोकने के लिए उनके विरुद्ध अवमानना का अधिकार क्षेत्र नहीं लगाया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि उन्होंने वर्ष 1988 में अपने किरायेदार के विरुद्ध बेदखली का मामला दायर किया था, जो अब तक लंबित है और न्यायालय की कार्यवाही का उनका अनुभव खराब रहा है। उन्होंने कहा कि संबंधित न्यायाधीश ने पिछले छह महीनों से उनकी फाइल तक नहीं पढ़ी और मामला पिछले छह महीनों से तथा छह तारीखों से स्वीकार नहीं किया गया जबकि वह सभी दृष्टियों से पूर्ण था। इसके बाद उन्होंने एक अन्य अनुभव का उल्लेख किया, जिसमें उन्होंने अपने मित्र द्वारा बकाया धनराशि लौटाने से इनकार करने पर शिकायत दर्ज की थी। इस शिकायत पर उन्हें कई बार थाने जाना पड़ा, किंतु पुलिस ने उनकी

शिकायत पर कोई कार्रवाई नहीं की। महत्वपूर्ण रूप से, उन्होंने यह नहीं कहा कि जिन न्यायिक अधिकारियों के नाम उन्होंने लिए हैं, वे वही हैं जहाँ उनके मामले लंबित थे। हालाँकि, उन्होंने अपने बैनरों में जिन तीन न्यायिक अधिकारियों के नाम दिए हैं, उनके संबंध में निम्नलिखित कथन किया है:-

> *"न्यायालयों को मैंने बहुत करीब से देखा है मैं दावे से कह सकता हूँ कि ऐसा हो ही नहीं सकता जज चारु असिवाल, जज अजय सिंह परिहार, जज अजय नरवाल जी की अदालत में आज तक बिना वजह तारीख पर तारीख ना लगी हो चाहे उसमें किसी वकील साहब का लिहाज़ ही किया गया, न्याय की दृष्टि से लिहाज़ भी पीड़ित के साथ अन्याय है। पीड़ित का एक एक दिन कीमती होता है। अगर ऐसा हुआ है तो क्या इन पर अवमानना का मुकद्दमा लगा कर क्या उस पीड़ित को हर्जाना दिया जाएगा?"*

22. उन्होंने यह भी निवेदन किया कि सभी न्यायालयों में न्यायालय की कार्यवाही का ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग होना चाहिए। इसके बाद उन्होंने निम्नलिखित सामान्यीकृत कथन किए:-

> *1. न्याय मिलने में अत्यधिक देरी से जनता का विश्वास कम होता है।*
> *2. अदालतों में भ्रष्टाचार के मामलों में जजों की कथित संलिप्तता जनता का विश्वास कम होता है।*

3. जजों द्वारा रिश्वत मांगने या स्वीकार करने के आरोप से जनता का विश्वास कम होता है।

4. कुछ जजों का अत्यधिक अवकाश लेना, जिससे मुकदमों में और देरी होती है जिससे जनता का विश्वास कम होता है।

5. कुछ जजों का अदालत में पूरा समय न देना, इससे भी विश्वास कम होता है।

6. मामलों में लगातार सुनवाई स्थगित करने से जनता का विश्वास कम होता है।

7. फैसलों में पारदर्शिता की कमी और अस्पष्ट तर्क से जनता का विश्वास कम होता है।

8. कुछ जजों का पश्चपातपूर्ण व्यवहार या किसी विशेष समूह के प्रति झुकाव से जनता का विश्वास कम होता है।

9. जजों द्वारा लम्बी और जटिल कानूनी प्रकियाओ को बढ़ावा देने से जनता का विश्वास कम होता है।

10. कमजोर और गरीबो के प्रति संवेदनहीनता के आरोप लगने से जनता का विश्वास कम होता है।

11. बड़े और प्रभावशाली लोगो के पक्ष में फैसले सुनाने के आरोप लगने से जनता का विश्वास कम होता है।

12. अदालती अवमानना के नाम पर आलोचना को दबाने से जनता का विश्वास कम होता है।

13. जजों की नियुक्ति प्रक्रिया में अपारदर्शिता और भाई-भतीजावाद से जनता का विश्वास कम होता है।

14. न्यायिक जवाबदेही की कमी और जजों के खिलाफ कार्रवाई के अभाव से जनता का विश्वास कम होता है।

15. कुछ जजों के अहंकारी या निरंकुश व्यवहार से जनता का विश्वास कम होता है।

> *16. महत्वपूर्ण मामलों में जनहित को नजरअंदाज करने से जनता का विश्वास कम होता है।*
> *17. वकीलों के साथ कथित मिलीभगत कर तारीख पर तारीख को बढ़ावा देने से जनता का विश्वास कम होता है।*
> *18. खुद को इतना खास बना देने से न्याय प्रक्रिया को आम आदमी की पहुंच से दूर होने से जनता का विश्वास कम होता है।*
> *19. सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को सम्बोधित करने में विफलता।*
> *20. जजों द्वारा कठोर टिप्पणियां करना जो जनता की भावनाओं को ठेस पहुंचाती हैं"*

23. उन्होंने कहा कि अन्य लोग भी सोशल मीडिया पर इसी प्रकार की शिकायतें पोस्ट कर रहे हैं और उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की गई है।

24. उन्होंने विभिन्न नैतिक प्रवचन और अन्य सामान्यीकृत कथन दिए, किंतु विशेष रूप से उन आरोपों से नहीं निपटे जिनके आधार पर वर्तमान अवमानना मामले उनके विरुद्ध दर्ज किए गए हैं।

25. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने आगे लिखित बहसें इंडेक्स दिनांक 22.03.2026 के अंतर्गत दाखिल कीं, जिनमें उन्होंने सत्य को एक बचाव के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने अवमानना न्यायालय अधिनियम, 1971 (जिसे आगे "अधिनियम" कहा जाएगा) की धारा 13(ख) का भी हवाला दिया, यह कहते हुए कि यदि वक्तव्य जनहित में और सद्भावना से दिए गए हैं, तो उन्हें अवमानना कार्यवाही में बचाव के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। उन्होंने भारत के

संविधान के अनुच्छेद 19(1)(a) का भी उल्लेख किया।उन्होंने प्रस्तुत किया कि न्यायालय को यह जांच करनी चाहिए कि उन्होंने वे कथन क्यों दिए जिनका श्रेय उन्हें दिया जा रहा है, बजाय इसके कि उनके विरुद्ध अवमानना की कार्यवाही चलाई जाए। उन्होंने कहा कि वे मुद्दों को उठाकर एक सार्वजनिक कर्तव्य का निर्वहन कर रहे हैं और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 51A का भी हवाला दिया। उन्होंने पुनः न्यायिक अधिकारियों के विरुद्ध अपने आरोपों को दोहराया और इस प्रकार कथन किया:-

> *"11 माननीय, वादी पक्ष (शिकायतकर्ता न्यायाधीश सुश्री चारु असिवाल जी, श्री अजय सिंह परिहार जी एवं न्यायिक प्रणाली) स्वयं स्थापित कानून और प्रक्रियाओं का पूर्णत: पालन नहीं कर रहे हैं| वादी पक्ष स्वयं स्वच्छ हाथों (clean Hands) के साथ न्यायालय के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ है"*

26. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने यह भी आरोप लगाया कि इन कार्यवाहियों में पारित कुछ न्यायिक आदेश *non-speaking* (अस्पष्ट/कारणरहित) थे और उन्हें पूर्ण सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित किए गए।

27. जब मामला अंतिम सुनवाई के लिए दिनांक 25.03.2026 को सूचीबद्ध हुआ, तब प्रत्यर्थी संख्या 2 ने एक और आवेदन दाखिल किया, जो आप. वि. अ. 9152/2026 था, जिसमें उन्होंने निम्नलिखित राहत की प्रार्थना की:-

> *" न्यायहित मे अपेक्षित है कि:*

> *"न्यायहित और निष्पक्षता सुनिश्चित करने हेतु, मुझे अंतिम बहस (Final Arguments) के लिए पर्याप्त समय प्रदान किया जाए | मेरा विनम्र निवेदन है कि समय प्रदान किया जाए| मेरा विनम्र निवेदन है कि मुझे प्रति सत्र (Session) एक से दो घंटे और कुल मिलाकर कम से कम 20 घंटों का समय उपलब्ध कराया जाए, ताकि मैं अपने पक्ष का समस्त तथ्यों और साक्ष्यों के साथ माननीय न्यायालय के समक्ष विस्तारपूर्वक रख सकूँ |*
>
> *चूंकि यह प्रकरण मेरे जीवन और भविष्य का अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न है, अतः न्याय के सिद्धांतों को ध्यान मे रखते हुए, न्यायालय को मुझे बिना किसी व्यवधान के यह समय सुनिश्चित करना चाहिए|" तथा प्रत्येक आदेश reasoning speaking प्रदान किया जाए"*

28. प्रत्यर्थी संख्या 2 को मौखिक सुनवाई का अवसर दिया गया, जो लगभग ढाई घंटे तक चला, जिसमें उन्होंने अपनी आवेदन, पूर्व उत्तर और दाखिल की गई लिखित बहसें पढ़ना शुरू किया। उन्हें विस्तार से सुनने के बाद, मामलों को निर्णय हेतु सुरक्षित रखा गया। हालाँकि, इसके बाद उन्होंने एक और आवेदन दाखिल किया, जो आप. वि. अ. 10002/2026 था जिसमें उन्होंने दावा किया कि उन्होंने "I REST MY CASE" नहीं कहा था और इसलिए, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन में, उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करने का और अवसर दिया जाना चाहिए।

29. यद्यपि हमने पहले ही प्रत्यर्थी संख्या 2 को अपना बचाव प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया था, न्यायहित में हमने उक्त आवेदन स्वीकार किया और

इन मामलों को आगे की सुनवाई हेतु दिनांक 06.04.2026 को सूचीबद्ध किया
।

30. दिनांक 06.04.2026 को, प्रत्यर्थी संख्या 2 ने अपनी आवेदन, अर्थात् आप. वि. अ. 10002/2026, पढ़ी और आगे प्रस्तुतियाँ दीं, मुख्यतः यह तर्क देते हुए कि उन्होंने अपने यूट्यूब चैनल पर संबंधित वीडियो सद्भावना रूप से पोस्ट किए थे। उन्होंने ***हरि दास एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य एवं अन्य*** (1964) SCC OnLine SC 264; ***पी. मोहनराज बनाम शाह ब्रदर्स*** (2021) 6 SCC 258; तथा ***खुशी राम बनाम शीयो वटी*** (1953) 1 SCC 726 के निर्णयों पर भरोसा करते हुए प्रस्तुत किया कि इन कार्यवाहियों में उन्हें वही अधिकार प्राप्त हैं जो किसी आपराधिक मामले में अभियुक्त को उपलब्ध होते हैं।

31. आगे, ***राज्य की शक्ति, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ, संदर्भ; विशेष संदर्भ संख्या 1 of 1964*** (1964) SCC OnLine SC 21; तथा ***एंड्रयू पॉल टेरेंस एम्बर्ड बनाम एंड्रयू पॉल त्रिनिदाद और टोबैगो के अटॉर्नी जनरल*** (1936) SCC OnLine PC 15 के निर्णयों पर भरोसा करते हुए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि आपराधिक अवमानना की कार्यवाही हेतु अधिकार क्षेत्र का प्रयोग अत्यंत सावधानी, संयम और उचित मनोयोग के साथ किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि इस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग विरल ही होना चाहिए, क्योंकि बार-बार इसका प्रयोग न्यायिक संस्था की प्रतिष्ठा को बचाने के बजाय उसे क्षति पहुँचा सकता

है। इसके समर्थन में उन्होंने ***टी. सी. गुप्ता बनाम हरि ओम प्रकाश*** (2013) 10 SCC 658 के निर्णय पर भरोसा किया।

32. प्रत्यर्थी संख्या 2 को दिनांक 06.04.2026 को पुनः विस्तार से सुनने के बाद हमने इन मामलों को निर्णय हेतु सुरक्षित रखा। हालाँकि, प्रत्यर्थी संख्या 2 ने दिनांक 07.05.2026 को हमारे न्यायालय मास्टर को संबोधित एक ई-मेल द्वारा अपनी लिखित प्रस्तुतियाँ प्रेषित कीं। हमने अपने निर्णय में उन प्रस्तुतियों पर भी विचार किया है।

33. प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा दाखिल लिखित प्रस्तुतियों में उन्होंने यह तर्क दिया कि संदर्भ ***भीलवाड़ा (राज।),*** [2026:RJ-JD:6479-DB] में राजस्थान उच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि प्रत्येक नागरिक को न्यायालयों की सद्भावना रूप से आलोचना करने का अधिकार है, और ऐसी आलोचना को सीमित करने से न्यायालय की अधिकारिता नहीं बढ़ेगी। निर्णय में यह भी स्पष्ट किया गया कि कोई कथन अपमानजनक हो सकता है, लेकिन वह अवमानना नहीं बनता; अवमानना तभी होगी जब वह कथन न्यायिक व्यवस्था को वास्तविक और गंभीर क्षति पहुँचाए और उसे दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से बदनाम करने के लिए दिया गया हो। यदि कथन जनहित में, तथ्यों पर आधारित और बिना किसी दुर्भावना के किया गया है, तो वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(a) के अंतर्गत संरक्षित है।

34. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ***निर्भय सिंह सूलिया बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य,*** 2026 SCC OnLine SC 8 पर भी

भरोसा किया, यह प्रस्तुत करने के लिए कि सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि कोई भी व्यक्ति यदि झूठी शिकायत करता है, जिसमें न्यायिक अधिकारी का अपमान भी शामिल है, तो उसे कठोर दंड दिया जाना चाहिए। हालाँकि, यदि ऐसी शिकायत prima facie (प्रथम दृष्टया) सही पाई जाती है, तो संबंधित न्यायिक अधिकारी के विरुद्ध तुरंत और विधि के अनुसार कार्यवाही की जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि हर कठोर आलोचना/कथन अवमानना नहीं होता और प्रत्येक नागरिक को न्यायिक व्यवस्था की आलोचना करने का अधिकार है। केवल तब जब यह दुर्भावनापूर्ण उद्देश्य से किया जाए, तभी यह अवमानना होगी।

35. उन्होंने यह प्रस्तुत करने के लिए कि न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अवमानना अधिकार क्षेत्र का प्रयोग संयम के साथ करना ही इस न्यायालय की उदारता है इस न्यायालय के निर्णय ***न्यायालय अपने समावेदन पर बनाम डीएसपी जयंत कश्मीरी एवं अन्य,*** 2017 SCC OnLine Del 7387 पर भी भरोसा किया है|

36. प्रत्यर्थी संख्या 2 ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ***संदर्भ: एस. मूलगाओंकार*** (1978) 3 SCC 339, ***मध्य प्रदेश राज्य बनाम नर्मदा बचाओ आंदोलन*** (2011) 7 SCC 639 तथा ***टी. सी गुप्ता*** *(supra)* पर भी भरोसा किया। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इसके विपरीत हालिया प्रवृत्ति यह है कि सरकारी अधिवक्ता न्यायालय के अधिकारी के रूप में और निष्पक्ष रूप से मामला प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि एक विरोधी पक्ष की तरह पेश आते हैं।

उन्होंने कहा कि इस कारण सर्वोच्च न्यायालय को ***महावीर एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य,*** 2025 SCC OnLine SC 184 में यह कहना पड़ा कि यदि सरकारी अधिवक्ता महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाते हैं या न्यायालय को गुमराह करते हैं, तो उनके विरुद्ध कार्यवाही की जानी चाहिए।

37. उन्होंने प्रस्तुत किया कि वर्तमान मामले में आरोप में यह निर्दिष्ट नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा किए गए कौन से कथन आपत्तिजनक पाए गए हैं, जिसके कारण वे उचित उत्तर देने में असमर्थ हैं।

विश्लेषण और निष्कर्ष:

38. हमने प्रत्यर्थी संख्या 2 की उपरोक्त प्रस्तुतियों पर विचार किया है।

39. अधिनियम की धारा 2(ग) में "आपराधिक अवमानना" शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी गई है:-

> ***2. परिभाषाएँ.-***
> *(ग) 'आपराधिक अवमानना' का अर्थ है किसी भी विषय का प्रकाशन (चाहे वह शब्दों द्वारा हो – बोले गए या लिखित, या संकेतों द्वारा, या दृश्य अभिव्यक्तियों द्वारा, या अन्य किसी प्रकार से) अथवा कोई अन्य कार्य करना, जो–*
> *(i) किसी न्यायालय को बदनाम करता है या बदनाम करने की प्रवृत्ति रखता है, अथवा उसकी अधिकारिता को कम करता है या कम करने की प्रवृत्ति रखता है; या*
> *(ii) किसी न्यायिक कार्यवाही की विधिवत् प्रक्रिया को प्रभावित करता है, या उसमें हस्तक्षेप करता है, अथवा हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है; या*

(iii) न्याय के प्रशासन में किसी अन्य प्रकार से हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है, अथवा उसे बाधित करता है या बाधित करने की प्रवृत्ति रखता है।”

40. ***ब्रहम प्रकाश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*** (1953) 1 SCC 813 में, सर्वोच्च न्यायालय ने मुज़फ्फरनगर ज़िला बार एसोसिएशन द्वारा पारित एक प्रस्ताव पर विचार किया था, जिसमें दो न्यायिक अधिकारियों के कार्य करने के तरीके की आलोचना की गई थी। सर्वोच्च न्यायालय ने यह रेखांकित किया कि अवमानना कार्यवाही का उद्देश्य न्यायाधीशों को व्यक्तिगत रूप से उन आरोपों से बचाना नहीं है जिनका सामना वे व्यक्तियों के रूप में कर सकते हैं, बल्कि इसका उद्देश्य जनता की रक्षा करना है, जिनके हित गंभीर रूप से प्रभावित हो सकते हैं यदि किसी पक्ष के कार्य या आचरण से न्यायालय की अधिकारिता कम हो जाए और न्याय प्रशासन में लोगों का विश्वास कमजोर पड़ जाए। न्यायाधीशों के चरित्र या क्षमता पर अनुचित और मानहानिकारक आरोप लगाना अवमानना होता है, क्योंकि यह अविश्वास पैदा करता है और जनता के विश्वास को कमजोर करता है। जहाँ ऐसी टिप्पणी निष्पक्ष और उचित आलोचना के अधिकार के प्रयोग में की जाती है, वहाँ यह अवमानना नहीं मानी जाएगी। हालाँकि, जब आक्षेप या टिप्पणियाँ अपमानजनक स्वरूप की हों और उनकी गरिमा को ठेस पहुँचाएँ, तो मानहानि और उस आचरण में अंतर करना आवश्यक है जो न्याय की विधिवत् प्रक्रिया और न्यायालय द्वारा विधि के

उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करने के लिए किया गया हो। हम निर्णय से उद्धृत कर सकते हैं, जैसा कि निम्नलिखित है:-

> *"**9.** इसमें कोई विवाद नहीं है कि उच्च न्यायालयों द्वारा अपने अधिकार की अवमानना को दंडित करने के लिए प्रयुक्त संक्षिप्त अधिकार-क्षेत्र का उद्देश्य न्याय की प्रक्रिया में हस्तक्षेप को रोकना और न्यायालयों द्वारा प्रशासित विधि के अधिकार को बनाए रखना है। यह केवल वही दोहराना होगा जो विभिन्न न्यायाधीशों द्वारा बार-बार कहा गया है कि अवमानना कार्य वाही का उद्देश्य न्यायाधीशों को व्यक्तिगत रूप से उन आरोपों से बचाना नहीं है जिनका वे व्यक्तियों के रूप में सामना कर सकते हैं; इसका उद्देश्य जनता की रक्षा करना है, जिनके हितों पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा यदि किसी पक्ष के कार्य या आचरण से न्यायालय का अधिकार कम हो जाता है और लोगों का न्याय के प्रशासन में जो विश्वास है वह कमजोर पड़ जाता है।*
>
> ***10.** वास्तव में, न्यायालयों में न्याय के उचित प्रशासन में बाधा डालने या उसे रोकने के असंख्य तरीके हो सकते हैं। ऐसे हस्तक्षेप का एक प्रकार उन मामलों में पाया जाता है जहाँ कोई कार्य या प्रकाशन स्वयं न्यायालय को 'कलंकित करने' के समान होता है – यह अभिव्यक्ति अंग्रेज़ी अधिवक्ताओं के लिए लॉर्ड हार्डविक के समय से ही परिचित है [रीड एंड हग्गोंसों, सन्दर्भ, (1742) 2 एटीके 469 पृष्ठ. 471 : 26 इआर 683]। यह कलंकित करना विभिन्न रूपों में प्रकट हो सकता है, लेकिन मूल रूप से यह व्यक्तिगत न्यायाधीशों या संपूर्ण न्यायालय पर आक्रमण होता है, चाहे वह किसी विशेष मामले के संदर्भ में हो या न हो, जिसमें न्यायाधीशों के चरित्र या क्षमता पर अनुचित और मानहानिकारक आरोप लगाए जाते हैं। ऐसे आचरण को अवमानना के रूप में इसलिए दंडित किया*

जाता है क्योंकि यह जनमानस में अविश्वास पैदा करता है और लोगों का न्यायालयों पर विश्वास कमजोर करता है, जबकि न्यायालय ही वादकारियों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

xxxxxx

***13.** अतः प्रतीत होता है कि जब न्यायालय को 'न्यायालय को कलंकित करने' के कारण की गई अवमानना के मामलों में संक्षिप्त शक्तियों का प्रयोग करना होता है, तो दो मुख्य विचार उसके सामने होने चाहिए। प्रथम, यदि किसी न्यायाधीश के न्यायिक कर्तव्यों के निर्वहन के संबंध में उसके आचरण या चरित्र पर की गई टिप्पणी निष्पक्ष और उचित आलोचना के अधिकार के अंतर्गत आती है, जो प्रत्येक नागरिक को न्यायालय में किए गए लोक कार्यों के संबंध में प्राप्त है, तो वह अवमानना नहीं होगी। आलोचना को दबाकर न्यायालयों में विश्वास उत्पन्न नहीं किया जा सकता। जैसा कि लॉर्ड एटकिन ने कहा था [अम्बार्ड बनाम अटॉर्नी जनरल, त्रिनिदाद और टोबैगो, 1936 एसी 322 पृष्ठ 335 (पीसी) , 1936 एसी 322 पृ. 335 (पीसी)] – 'आलोचना का मार्ग एक लोक मार्ग है। अनुचित सोच वाले भी उसमें त्रुटि करने के लिए स्वतंत्र हैं; बशर्ते कि जनता के सदस्य न्याय के प्रशासन में भाग लेने वालों पर उद्देश्यों का आरोप लगाने से बचें और वास्तव में आलोचना के अधिकार का प्रयोग करें, न कि दुर्भावना से कार्य करें या न्याय के प्रशासन को कमजोर करने का प्रयास करें, तो वे सुरक्षित हैं।*

***14.** द्वितीयतः, जब किसी न्यायाधीश अथवा न्यायाधीशों पर आक्रमण अथवा टिप्पणियाँ की जाती हैं, जो उनके चरित्र को नीचा दिखाने वाली और उनकी गरिमा को अपमानित करने वाली हों, तो यह सावधानी बरतनी चाहिए कि न्यायाधीश पर की गई मानहानि और वास्तविक न्यायालय की अवमानना में क्या अंतर है। यह तथ्य कि*

कोई कथन न्यायाधीश के संबंध में मानहानिकारक है, आवश्यक रूप से उसे अवमानना नहीं बना देता। मानहानि और अवमानना के बीच का भेद प्रिवी काउंसिल की एक समिति द्वारा इंगित किया गया था, जिसकी ओर 1892 में राज्य सचिव द्वारा संदर्भ किया गया था [स्पेशल रेफरेंस फ्रॉम द बहामा आइलैंड्स, सन्दर्भ में, 1893 एसी 138 (पीसी)]। बहामा द्वीपों में एक व्यक्ति ने एक औपनिवेशिक समाचारपत्र में प्रकाशित पत्र में कॉलोनी के मुख्य न्यायाधीश की अत्यंत अनुचित भाषा में आलोचना की, जो व्यंग्यात्मक एवं तीक्ष्ण थी। उसमें यह संकेत छिपा हुआ था कि वह एक अयोग्य न्यायाधीश हैं और कार्य से बचने वाला है तथा लेखक ने इस प्रकार सुझाव दिया कि यदि उसकी मृत्यु हो जाए तो यह ईश्वरीय कृपा होगी। 11 सदस्यों का एक सशक्त बोर्ड ने यह प्रतिवेदन दिया कि जिस पत्र की शिकायत की गई थी, यद्यपि वह मानहानि की कार्यवाही का विषय हो सकता था, किन्तु परिस्थितियों में वह न्याय की प्रक्रिया अथवा विधि के उचित प्रशासन में बाधा डालने या हस्तक्षेप करने के लिए अभिप्रेत नहीं था और इसलिए वह न्यायालय की अवमानना नहीं था। यही सिद्धांत लॉर्ड एटकिन द्वारा देबी प्रसाद शर्मा बनाम किंग एम्परर [देबी प्रसाद शर्मा बनाम किंग एम्परर, (1942-43) 70 आईए 216 : 1943 एससीसी ऑनलाईन पीसी 31] में पुनः प्रतिपादित किया गया था। इसे आर. बनाम निकोल्स [आर. बनाम निकोल्स, (1911) 12 सीएलआर 280 (ऑस्ट्रेलिया)] में ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय द्वारा अनुसरण किया गया और अनुमोदित किया गया तथा इस न्यायालय द्वारा बथीना रामकृष्ण रेड्डी बनाम स्टेट ऑफ मद्रास [बथीना रामकृष्ण रेड्डी बनाम स्टेट ऑफ मद्रास, (1952) 1 एससीसी 154 : 1952 एससीआर 425] में इसे उचित माना गया। स्थिति, अतः यह है कि किसी न्यायाधीश पर मानहानिकारक आक्रमण न्यायाधीश के संबंध में मानहानि

हो सकता है और उसके लिए न्यायाधीश को उचित कार्यवाही में मानहानिकारक व्यक्ति के विरुद्ध जाने का अधिकार होगा यदि वह ऐसा करना चाहे। किन्तु यदि अपमानजनक कथन का प्रकाशन न्याय की उचित प्रक्रिया अथवा विधि के प्रशासन में बाधा डालने के लिए अभिप्रेत है, तो उसे संक्षिप्त रूप से अवमानना के रूप में दंडित किया जा सकता है। एक न्यायाधीश के विरुद्ध व्यक्तिगत रूप से किया गया अन्याय है जबकि दूसरा जनता के विरुद्ध किया गया अन्याय है। यह जनता के लिए हानिकारक होगा यदि इससे लोगों के मन में न्यायाधीश की सत्यनिष्ठा, क्षमता अथवा निष्पक्षता के संबंध में आशंका उत्पन्न होती है अथवा वास्तविक और भावी वादकारियों को न्यायालय के न्याय प्रशासन पर पूर्ण विश्वास रखने से रोका जाता है, अथवा यदि इससे स्वयं न्यायाधीश के मन में अपने न्यायिक कर्तव्यों के निर्वहन में संकोच उत्पन्न होने की संभावना है। यह सुव्यवस्थित है कि यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है कि ऐसे मानहानिकारक कथन के कारण वास्तव में न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप हुआ है; पर्याप्त है यदि यह संभावित है, अथवा किसी भी प्रकार न्याय के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है।"

41. ***सन्दर्भ: एस. मुलगांवकर*** (पूर्वोक्त) में तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश, न्यायमूर्ति एम. एच. बेग ने यह अभिप्राय व्यक्त करते हुए कि न्यायपालिका आलोचना से मुक्त नहीं हो सकती, यह प्रतिपादित किया कि जब ऐसी आलोचना स्पष्ट विकृति अथवा गंभीर मिथ्या प्रस्तुति पर आधारित हो अथवा न्यायपालिका के प्रति सम्मान को कम करने तथा उसमें जनता के विश्वास को नष्ट करने के उद्देश्य से की गई हो, तो उसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। यद्यपि अनेक मामलों में यह न्यायपालिका के लिए बेहतर हो सकता है कि वह

उदारतापूर्वक दानशील दृष्टिकोण अपनाए, भले ही उसके कार्यों की अत्यंत अनुचित और अन्यायपूर्ण आलोचना सुधार हेतु सद्भावपूर्ण चिंता से की गई हो; किन्तु जब ऐसा प्रतीत होता है कि कोई योजना अथवा उद्देश्य है जिसके परिणामस्वरूप हमारे न्यायिक तंत्र में विश्वास को क्षति पहुंचे और न्यायाधीशों को दुर्भावनापूर्ण आक्रमणों द्वारा निरुत्साहित किया जाए, तो ऐसे मामलों का कठोरता से निपटान किया जाना आवश्यक है।"

42. माननीय न्यायमूर्ति श्री वी. आर. कृष्ण अय्यर ने अपने सहमति मत में यह अभिप्राय व्यक्त किया कि प्रत्येक अवमानना का परिणाम कारावास अथवा दंड में नहीं होना चाहिए; इसका प्रयोग विवेकपूर्ण और संयमित ढंग से किया जाना चाहिए। इसे निष्पक्ष आलोचना के संवैधानिक मूल्यों के साथ भी सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है। इसका अस्तित्व न्याय के प्रशासन में जनता के विश्वास की रक्षा हेतु है, और यदि न्यायालय यह मानता है कि न्यायाधीशों पर किया गया आक्रमण घृणास्पद, अपमानजनक, भयप्रद अथवा दुर्भावनापूर्ण है और क्षम्य सीमा से परे है, तो विधि की कठोर भुजा, जनहित और जन न्याय के नाम पर, विधि के शासन की सर्वोच्चता को चुनौती देने वाले पर प्रहार करना चाहिए। उक्त निर्णय में न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्ण अय्यर द्वारा लागू सिद्धांतों का सार इस प्रकार प्रस्तुत किया गया था:-

> ***"26.*** *तब वे कौन-से विचारों का समूह है जो दंडात्मक कार्रवाई से विरत करता है? पूर्णतः सूचीबद्ध करना एक दुरूह कार्य है; उपदेशात्मक होना अव्यावहारिक है; लचीला होना यथार्थवादी है। तब ये व्यापक दिशा निर्देश क्या हैं –*

जो संपूर्ण सूची नहीं है, किन्तु पूर्ववर्ती दृष्टांतों द्वारा मान्य न्यायिक मानक हैं?

27. *इस अवमानना शक्ति की शाखा में प्रथम नियम यह है कि न्यायालय इस अधिकार-क्षेत्र की इस शाखा का विवेकपूर्ण और संयमित उपयोग करे। न्यायालय गंभीरता और कठोरता के साथ कार्य करेगा जहाँ न्याय को न्यायाधीशों पर गंभीर और/या निराधार आक्रमण द्वारा संकट में डाला जाता है, जहाँ आक्रमण न्यायिक प्रक्रिया को बाधित या नष्ट करने के लिए अभिप्रेत होता है। न्यायालय उदारतापूर्ण दृष्टिकोण से तुच्छ और क्षम्य अपराधों को अनदेखा करने के लिए तत्पर रहेगा – कुत्ते भौंक सकते हैं, कारवाँ आगे बढ़ेगा। न्यायालय सरल चिड़चिड़ेपन के परिणामस्वरूप कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं होगा। बल्कि, वह विशेषताओं के समग्र पर बौद्धिक दृष्टि डालें और जब वह अपनी अवमानना शक्ति का प्रयोग करने अथवा उससे विरत रहने का चुनाव करेगा, तो संवैधानिक और अन्य विचारों के समूह द्वारा निर्देशित होगा।*

28. *द्वितीय सिद्धांत यह होना चाहिए कि स्वतंत्र आलोचना के संवैधानिक मूल्यों, जिसमें चतुर्थ स्तंभ भी सम्मिलित है, और निर्भीक न्यायिक प्रक्रिया तथा उसके अध्यक्षीय पदाधिकारी, न्यायाधीश, की आवश्यकता के बीच सामंजस्य स्थापित किया जाए। एक संतुलन स्थापित किया जाना आवश्यक है, संदेह का लाभ उदारतापूर्वक न्यायाधीश के विरुद्ध दिया जाए, सीमांत विचलनों को अनदेखा किया जाए, किन्तु झगड़ालू, दुष्ट, अप्रायश्चित और दुर्भावनापूर्ण अवमाननाकर्ताओं पर विधि की सर्वोच्चता को कठोरता से सिद्ध किया जाए, चाहे वे शक्तिशाली प्रेस हों, स्वार्थी हितों का गिरोह हो, या प्रतिष्ठित संस्थानों के अनुभवी स्तंभकार हों। यह इसलिए नहीं कि न्यायाधीश, जो उच्च मूल्य का मानवीय प्रतीक है, व्यक्तिगत रूप से किसी शाही विशेषाधिकार से संरक्षित है, बल्कि इसलिए कि 'चाहे*

अवमानानाकार कितना भी उच्च हो, विधि – जो जनता की न्याय की अभिव्यक्ति है – उससे ऊपर है।' न्यायिक साहस विजयी होता है, क्योंकि यह देने वाले और लेने वाले दोनों को आशीष देता है। जहाँ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, निष्पक्ष रूप से प्रयुक्त होकर, उचित सीमा में जनहित की सेवा करती है, वहाँ जनन्याय उसे रोक नहीं सकता और न ही उसे जकड़ सकता है, संवैधानिक दृष्टि से। स्वतंत्र जनता निर्भीक न्याय की अंतिम गारंटी है। यही हमारे संविधान का आधारशिला है; यही हमारी अवमानना शक्ति का कसौटी है, जो स्वतंत्र अभिव्यक्ति और निष्पक्ष न्याय के संगम पर आधारित है, जो हमारे मौलिक विधि का शास्त्रीय सार है। सामाजिक दर्शन और विधि दर्शन की एकीकृत दृष्टि से, जैसा कि न्यायालय की अवमानना पर लागू होता है, कोई वैचारिक विरोधाभास नहीं है बल्कि एक सूक्ष्म संतुलन है, और न्यायिक 'प्रज्ञा' ही सीमा निर्धारित करती है। जैसा कि हुआ, हमारे संविधान-निर्माताओं ने इन प्रतिस्पर्धी हितों के संतुलन की आवश्यकता का पूर्वानुमान किया था। न्यायालयों की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2(1)(ग) यह प्रावधान करती है:

> *"'आपराधिक अवमानना' का अर्थ है किसी विषय का प्रकाशन (चाहे शब्दों द्वारा, मौखिक या लिखित, या संकेतों द्वारा, या दृश्य अभिव्यक्तियों द्वारा, या अन्यथा) अथवा किसी अन्य कार्य का करना, जो–*
>
> *(i) न्यायालय को कलंकित करता है या कलंकित करने की प्रवृत्ति रखता है, या किसी न्यायालय के अधिकार को कम करता है या कम करने की प्रवृत्ति रखता है।"*

यह अत्यंत व्यापक परिभाषा है। किन्तु इसे संवैधानिक प्रावधानों के समग्र से पृथक नहीं पढ़ा जा सकता, जिसके अंतर्गत संविधान के निर्माताओं ने सभी पूर्ववर्ती और भावी विधियों को अर्थ देने का अभिप्राय किया था। न्यायालयों से

अपेक्षित था – और वास्तव में यह उनकी जिम्मेदारी थी – कि वे परस्पर विरोधी उद्देश्यों, हितों और मूल्यों का सामंजस्य स्थापित करें। यह यूनाइटेड किंगडम में फिलिमोर समिति रिपोर्ट ऑन कंटेम्प्ट ऑफ कोर्ट से तीव्र विरोधाभास में है, जिसने अवमानना मामलों में जनहित के प्रतिरक्षा का अनुशंसा नहीं किया।

29. *तृतीय सिद्धांत यह है कि मानहानि किए गए न्यायाधीश की व्यक्तिगत सुरक्षा और सार्वजनिक न्याय में अवरोध की रोकथाम तथा उस महान प्रक्रिया में समुदाय के विश्वास के बीच भ्रम से बचा जाए। पूर्ववर्ती अवमानना नहीं है, परवर्ती अवमानना है, यद्यपि दोनों के बीच आच्छादित क्षेत्र प्रचुर मात्रा में हैं।*

30. *क्योंकि अवमानना का विधि न्याय के प्रशासन में जनता के विश्वास की रक्षा हेतु अस्तित्व में है, अतः व्यक्तिगत न्यायाधीशों की प्रतिष्ठा पर आक्रमण करने से अपराध नहीं बनता। जैसा कि प्रोफेसर गुडहार्ट ने कहा है:*

"न्यायालय को कलंकित करना का अर्थ है न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश पर कोई शत्रुतापूर्ण आलोचना करना; उस पर कोई व्यक्तिगत आक्रमण, जो उसके पद से असंबद्ध हो, सामान्य मानहानि और अपवाद के नियमों के अंतर्गत निपटाया जाता है।'

इसी प्रकार, ऑस्ट्रेलिया के निकोल्स मामले में मुख्य न्यायाधीश ग्रिफिथ ने कहा है:

'एक अर्थ में, निस्संदेह, न्यायाधीश के संबंध में प्रत्येक मानहानिकारक प्रकाशन को यह कहा जा सकता है कि वह उसे अवमानना में लाता है, जैसा कि मानहानि के विधि में प्रयुक्त शब्द है, किन्तु इससे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि न्यायाधीश के संबंध में कही गई प्रत्येक बात, जो उसे उस अर्थ में अवमानना में लाने के लिए अभिप्रेत है, न्यायालय की अवमानना बन जाती है।'

इस प्रकार बहामा द्वीपों से विशेष संदर्भ के मामले में, प्रिवी काउंसिल ने यह परामर्श दिया कि नासाउ गार्जियन में प्रकाशित एक लेख द्वारा निवासी मुख्य न्यायाधीश के संबंध में अवमानना नहीं की गई थी, जिसने स्वयं पूर्व में स्थानीय स्वच्छता परिस्थितियों की आलोचना की थी। यद्यपि वह प्रकाशन अत्यंत व्यंग्यात्मक शब्दों में था, किन्तु उसने मुख्य न्यायाधीश को उनके आधिकारिक पद के रूप में नहीं, बल्कि व्यक्तिगत रूप में संदर्भित किया था। अतः जबकि वह मानहानि हो सकती थी, वह अवमानना नहीं थी।

31. *चतुर्थ कार्यात्मक सिद्धांत, जो अवमानना शक्ति के विवेकाधीन प्रयोग को मार्गदर्शित करता है, यह है कि चतुर्थ स्तंभ, जो राज्य और जनता के बीच एक अनिवार्य मध्यस्थ है तथा लोकतंत्र की शक्तियों को सुदृढ़ करने में आवश्यक साधन है, उसे उत्तरदायी सीमाओं के भीतर स्वतंत्र रूप से कार्य करने दिया जाना चाहिए, भले ही उसकी आलोचनात्मक दृष्टि का केंद्र न्यायालय हो, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय भी सम्मिलित है।*

32. *पंचम मानक दिशानिर्देश, जिसका पालन न्यायाधीशों को इस अधिकार-क्षेत्र में करना चाहिए, यह है कि वे अत्यधिक संवेदनशील न हों, भले ही विकृतियाँ और आलोचनाएँ सीमाओं से आगे बढ़ जाएँ; बल्कि अश्लील निंदा को गरिमामय आचरण, उपेक्षापूर्ण उदासीनता और न्यायिक सत्यनिष्ठा द्वारा निष्प्रभावी करें।*

33. षष्ठ विचार यह है कि, सभी कारकों का मूल्यांकन करने के पश्चात यदि न्यायालय यह मानता है कि न्यायाधीश अथवा न्यायाधीशों पर किया गया आक्रमण घृणास्पद, अपमानजनक, भयप्रद अथवा दुर्भावनापूर्ण है और क्षम्य सीमा से परे है, तो विधि की कठोर भुजा, जनहित और जन न्याय के नाम पर, विधि के शासन की सर्वोच्चता

> *को चुनौती देने वाले पर प्रहार करना चाहिए, जो उसके स्रोत और प्रवाह को दूषित करता है।*
>
> ***34.*** *सामान्यतः कहा जाए तो ऐसे अवसर आते हैं जब टिप्पणी करने का अधिकार सर्वोच्च मूल्य का हो सकता है (उदाहरणार्थ, इंग्लैंड में थैलिडोमाइड बेबीज़ मामलों में) और अवमानना का विधि प्रतिस्पर्धी मूल्यों को समायोजित करना चाहिए तथा उसके अनुप्रयोग को स्वतंत्र समाज की आवश्यकताओं और किसी दी गई परिस्थिति में सर्वोपरि जनहित पर बदलते हुए बलाघात द्वारा संशोधित किया जाना चाहिए।"*

43. ***हरिदास दास बनाम उषा रानी बानिक (श्रीमती) व अन्य,*** (2007) 14 एससीसी 1 में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह बल दिया कि प्रयुक्त भाषा की तीव्रता मात्र ही न्यायालय की अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति का मापदंड नहीं है; साथ ही, न्याय के प्रशासन की धारा को अशुद्ध नहीं रहने देना चाहिए और, अतः, न्यायिक आकाश को प्रदूषित करने वालों से कठोरता से निपटा जाना आवश्यक है। यद्यपि न्यायाधीश और न्यायालय आलोचना के लिए खुले हैं, किन्तु जहाँ यह पाया जाता है कि ऐसी आलोचना का उद्देश्य न्याय के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करना अथवा उसकी गरिमा को कम करना है, वहाँ उससे कठोरता से निपटा जाना चाहिए। हम निर्णय से उद्धृत करते हैं:-

> *"**12.** भारत के संविधान में यह गारंटी दी गई है कि वाणी और लेखन की स्वतंत्रता होगी, किन्तु उस पर युक्तिसंगत प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। अमेरिका और भारत में प्रचलित विभिन्न सुझावों की तुलना करना प्रासंगिक होगा। यह ध्यान देने योग्य है कि अमेरिका में न्यायाधीश के*

विरुद्ध अथवा किसी लंबित मामले के संबंध में किए गए सभी वक्तव्य न्यायालय की अवमानना नहीं माने जाते। अनुच्छेद 19 में 'युक्तिसंगत प्रतिबंध' की अभिव्यक्ति प्रयुक्त है, जो लगभग अमेरिकी शब्दावली 'अन्तर्निहित प्रवृत्ति' या 'युक्तियुक्त प्रवृत्ति' के समान है। अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने ब्रिजेस बनाम कैलिफोर्निया में कहा:

> *'स्पष्ट और वर्तमान खतरे' के मामलों से जो कार्यशील सिद्धांत उभरता है, वह यह है कि वास्तविक दुष्प्रभाव अत्यंत गंभीर होना चाहिए और उसकी आसन्नता का स्तर अत्यंत उच्च होना चाहिए, तभी वक्तव्यों को दंडित किया जा सकता है।"*

*"**13.** प्रयुक्त भाषा की तीव्रता मात्र ही न्यायालय की अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति का मापदंड नहीं है। उससे उत्पन्न अग्नि आसन्न खतरे का रूप लेनी चाहिए, केवल संभावित खतरे का नहीं, न्याय के प्रशासन के लिए। न्याय के प्रशासन की धारा अशुद्ध नहीं रहनी चाहिए ताकि न्यायालय का वातावरण शुद्ध रहकर राज्य के सभी अंगों को जीवंतता प्रदान कर सकें। न्यायिक आकाश को प्रदूषित करने वालों से, अतः, कठोरता से निपटा जाना आवश्यक है ताकि न्यायालय के वातावरण की उदात्तता बनी रहे; और ताकि वह न्याय को निष्पक्ष रूप से और सभी संबंधितों की संतुष्टि हेतु प्रशासित कर सके। इसी प्रकार के प्रभाव में लॉर्ड मॉरिस ने अटॉर्नी जनरल बनाम टाइम्स न्यूज़पेपर्स में यह अभिप्राय व्यक्त किया कि जब*

> *'अनुचित हस्तक्षेप को दबाया जाता है तो यह इसलिए नहीं कि न्याय के प्रशासन की जिम्मेदारी निभाने वाले अपनी गरिमा के लिए चिंतित हैं; बल्कि इसलिए कि यदि देश के माननीय न्यायालयों की इस प्रकार अवहेलना की जाती है कि उनका अधिकार क्षीण हो जाए और प्रतिस्थापित हो जाए, तो संगठित जीवन की संरचना ही जोखिम में पड़ जाती है।"*

14. *इसी प्रकार के प्रभाव में न्यायमूर्ति हिदायतुल्लाह, मुख्य न्यायाधीश (जैसा कि उस समय वे माननीय न्यायाधीश थे) ने रुस्तम कावसजी कूपर बनाम भारत संघ, [(1970) 2 एससीसी 298] में यह अभिप्राय व्यक्त किया: '*

> *6. इसमें कोई संदेह नहीं कि न्यायालय, किसी अन्य संस्था की तरह, निष्पक्ष आलोचना से मुक्त नहीं है। यह न्यायालय यह दावा नहीं करता कि वह सदैव सही है, यद्यपि वह अपनी सर्वोत्तम क्षमता, ज्ञान और न्यायाधीशों के विवेक के अनुसार सही होने का हर संभव प्रयास करता है। वे यह नहीं मानते कि उनके पास सम्पूर्ण सत्य है या जहाँ अन्य उनसे भिन्न होते हैं, वहाँ वे आवश्यक रूप से त्रुटि में हैं। कोई भी न्यायाधीश अपनी सीमाओं और त्रुटिपूर्ण होने की संभावना से अधिक सचेत नहीं होता, किन्तु अपने प्रशिक्षण और विद्वान अधिवक्ताओं से प्राप्त सहायता के कारण वह दूसरों की अपेक्षा अधिक त्रुटियों से बचने में सक्षम होता है। ... जबकि इस न्यायालय की निष्पक्ष और संयमित आलोचना ... भले ही तीव्र हो, दंडनीय नहीं हो सकती, किन्तु अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाना, या न्यायाधीशों अथवा न्यायालयों को घृणा और अवमानना में लाने की प्रवृत्ति रखना, अथवा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से न्यायालयों के कार्य में बाधा डालना, गंभीर अवमानना है, जिसकी संज्ञान अवश्य लिया जाएगा। सम्मान की अपेक्षा केवल उनसे नहीं है जिन्हें न्यायालय का निर्णय स्वीकार्य है, बल्कि उनसे भी है जिन्हें वह अप्रिय है। जो लोग अपनी आलोचना में न्यायालयों की संस्था, न्याय के प्रशासन और उन साधनों की निंदा में लिप्त होते हैं जिनके माध्यम से प्रशासन कार्य करता है, उन्हें सावधान रहना चाहिए क्योंकि वे अपने ही जोखिम पर कार्य करेंगे।"*

15. *न्यायालय की अवमानना का गठन करने वाले आचरण के विशेष उदाहरणों पर प्रचुर मात्रा में अनुभवजन्य निर्णय उपलब्ध हैं। हम अब कुछ का उल्लेख करेंगे। लॉर्ड रसेल ऑफ किल्लोवेन, एल.सी. ने आर. बनाम ग्रे में यह प्रतिपादित किया: (ऑल ईआर पृ. 62 सी) –*

> *"कोई भी कार्य किया गया अथवा कोई लेख प्रकाशित किया गया, जो न्यायालय या न्यायालय के किसी न्यायाधीश को अवमानना में लाने या उसके अधिकार को कम करने के लिए अभिप्रेत हो, न्यायालय की अवमानना है।"*

16. *यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि निर्णय आलोचना के लिए खुले हैं और उक्त मामले में यह अभिप्राय व्यक्त किया गया:*

> *'न्यायाधीश और न्यायालय समान रूप से आलोचना के लिए खुले हैं यदि किसी न्यायिक कार्य के विरुद्ध युक्तिसंगत तर्क या प्रतिवाद प्रस्तुत किया जाता है कि वह विधि अथवा जनकल्याण के विपरीत है। कोई भी न्यायालय उसे [न्यायालय की अवमानना] नहीं मानेगा।'*
>
> *वास्तव में, अधिनियम की धारा 5 अब यह प्रावधान करती है कि कोई व्यक्ति न्यायालय की अवमानना का दोषी नहीं होगा यदि वह किसी ऐसे मामले के गुणों पर, जिसे सुना जा चुका है और अंततः निर्णय किया जा चुका है, कोई निष्पक्ष टिप्पणी प्रकाशित करता है। किन्तु यदि ऐसी प्रतिरक्षा ली जाती है, तो सदैव यह परीक्षण करना खुला रहता है कि कथित आपतिजनक प्रकाशन मामले के गुणों पर निष्पक्ष टिप्पणी के रूप में था या न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश पर व्यक्तिगत घृणास्पद आक्रमण था; क्योंकि न्यायाधीश या न्यायालय का दुरुपयोग अथवा न्यायाधीश के व्यक्तिगत चरित्र पर आक्रमण स्पष्ट*

रूप से दंडनीय अवमानना है। जैसा कि हैल्सबरी'ज़ लॉज़ ऑफ इंग्लैंड, चौथा संस्करण, खंड 9, पृष्ठ 21 के अनुच्छेद 27 में कहा गया है:

'दंड इसलिए नहीं दिया जाता कि न्यायालय को संपूर्ण रूप से या न्यायालय के व्यक्तिगत न्यायाधीशों को आक्रमण की पुनरावृति से बचाया जाए, बल्कि इसलिए कि जनता की रक्षा की जाए, विशेषकर उन लोगों की जो स्वेच्छा से या विवश होकर न्यायालय के अधिकार-क्षेत्र के अधीन हैं, उस हानि से जो उन्हें होगी यदि न्यायाधिकरण का अधिकार कमजोर या क्षीण हो जाए।"

***17.** इस दृष्टिकोण को इस न्यायालय ने डी.सी. सक्सेना (डा.) बनाम भारत के मुख्य न्यायाधीश में प्रतिध्वनित किया। हैल्सबरी'ज़ लॉज़ ऑफ इंग्लैंड के उसी खंड में अनुच्छेद 27 में यह कहा गया है:*

'27. न्यायालय को कलंकित करना– कोई भी कार्य किया गया अथवा कोई लेख प्रकाशित किया गया, जो न्यायालय या न्यायालय के किसी न्यायाधीश को अवमानना में लाने या उसके अधिकार को कम करने, अथवा न्याय के विधिसम्मत प्रवाह या न्यायालय की विधि सम्मत प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के लिए अभिप्रेत हो, न्यायालय की अवमानना है।'

***18.** उपरोक्त प्रतिपादन को लॉर्ड एटकिन ने आंद्रे पॉल टेरेंस एम्बार्ड बनाम अटॉर्नी जनरल ऑफ त्रिनिदाद एंड टोबैगो [एआईआर 1936 पीसी 141] में अनुमोदित और अनुसरण किया। उन्होंने यह अभिप्राय व्यक्त किया:*

'न्यायासन में किए गए सार्वजनिक कार्य की निष्पक्ष आलोचना करने के सामान्य अधिकार का प्रयोग करने वाला कोई भी व्यक्ति, चाहे निजी रूप से या सार्वजनिक रूप से, कोई अपराध नहीं करता। आलोचना का मार्ग सार्वजनिक मार्ग है: गलत सोच वाले भी उसमें त्रुटि करने की अनुमति

रखते हैं: बशर्ते कि जनता के सदस्य न्याय के प्रशासन में भाग लेने वालों को अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाने से बचें, और वे वास्तव में आलोचना के अधिकार का प्रयोग कर रहे हों, दुर्भावना से कार्य नहीं कर रहे हों या न्याय के प्रशासन को कमजोर करने का प्रयास नहीं कर रहे हों, तो वे सुरक्षित हैं। न्याय कोई संन्यासिनी सद्गुण नहीं है: उसे सामान्य जनों की जांच और सम्मानजनक, यद्यपि स्पष्ट टिप्पणियों को सहन करने की अनुमति दी जानी चाहिए।'

19. *लॉर्ड जस्टिस डोनोवन ने अटॉर्नी जनरल बनाम बटरवर्थ में, आर. बनाम ओधम्स प्रेस लिमिटेड, एक्स.पी. ए-जी का संदर्भ देने के बाद यह अभिप्राय व्यक्त किया।*

"यह प्रश्न कि न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करने का इरादा था या नहीं, दंड से संबंधित है, अपराध से नहीं।"

इससे यह स्पष्ट होता है कि न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करने का इरादा न्यायालय की अवमानना के अपराध का एक आवश्यक तत्व है और इतना पर्याप्त है यदि कथित कार्य स्वभावतः ऐसा करने की संभावना रखता है। मॉरिस बनाम क्राउन ऑफिस में लॉर्ड डेनिंग, एम.आर. ने कहा:

न्याय की प्रक्रिया को मोड़ा या बाधित नहीं किया जाना चाहिए। जो ऐसा करते हैं वे हमारे समाज की नींव पर प्रहार करते हैं।'

उसी मामले में लॉर्ड जस्टिस सैल्मन ने कहा:

'अवमानना की कार्यवाही का एकमात्र उद्देश्य हमारे न्यायालयों को यह शक्ति देना है कि वे जनता के अधिकारों की प्रभावी रूप से रक्षा कर सकें यह सुनिश्चित करके कि न्याय का प्रशासन बाधित या रोका न जाए।'

20. *न्यायमूर्ति फ्रैंकफर्टर ने ऑफट बनाम संयुक्त राज्य में अपना दृष्टिकोण इस प्रकार व्यक्त किया: (एल एड पृ. 16)*

'यह विधि की महिमा को उसके सक्रिय रूप में, अवरोध और अपमान के विरुद्ध प्रतिष्ठित करने का एक तरीका है।'

__21.__ जेनिसन बनाम बेकर [(1972) 2 QB 52] में कहा गया:

विधि को निष्क्रिय बैठा हुआ नहीं दिखना चाहिए, जबकि जो इसे चुनौती देते हैं वे मुक्त हो जाएँ और जो इसकी सुरक्षा चाहते हैं वे आशा खो दें।'

__22.__ न्यायमूर्ति चिन्नाप्पा रेड्डी ने एडवोकेट जनरल, बिहार राज्य बनाम एम.पी. खैर इंडस्ट्रीज़ में ऑफट और जेनिसन के निर्णयों का हवाला देते हुए कहा:

"यह आवश्यक हो सकता है कि अवमानना के रूप में उस आचरण को दंडित किया जाए जो न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग करता है और उसका उपहास बनाता है, और इस प्रकार उसका हानिकारक प्रभाव पक्षकारों से परे फैलाता है तथा न्याय के प्रशासन में जनता की रुचि को प्रभावित करता है। जनता की इसमें रुचि है – स्थायी और वास्तविक रुचि – और न्याय के प्रभावी तथा सुव्यवस्थित प्रशासन में उनका महत्वपूर्ण हित निहित है, क्योंकि यदि न्याय इस प्रकार प्रशासित नहीं होता, तो सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं के नष्ट होने का संकट है। न्यायालय का कर्तव्य है कि वह न्याय के विधिसम्मत प्रशासन में जनता के हित की रक्षा करे और, इसलिए, उसे न्यायालय की अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति सौंपी गई है, न कि न्यायालय की गरिमा को अपमान या चोट से बचाने के लिए, जैसा कि 'न्यायालय की अवमानना' की अभिव्यक्ति से प्रतीत हो सकता है, बल्कि जनता के उस अधिकार की रक्षा और पुष्टि करने के लिए कि न्याय का प्रशासन रोका, पूर्वाग्रहित, बाधित या हस्तक्षेपित न किया जाए।

__23.__ न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने एस. मुलगांवकर, सन्दर्भ [(1978) 3 एससीसी 339 : 1978 एससीसी (क्रि) 402] में अपने पृथक निर्णय में न्यायालय की अवमानना के मामलों में दंडात्मक कार्रवाई करने हेतु व्यापक दिशा निर्देश देते हुए कहा:

'...यदि न्यायालय यह मानता है कि न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर किया गया आक्रमण घृणास्पद, अपमानजनक, भयप्रद अथवा दुर्भावनापूर्ण है और क्षम्य सीमा से परे है, तो विधि की कठोर भुजा, जनहित और जन न्याय के नाम पर, विधि के शासन की सर्वोच्चता को चुनौती देने वाले पर प्रहार करना चाहिए, जो उसके स्रोत और प्रवाह को दूषित करता है।'

24. *ब्रह्म प्रकाश शर्मा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [(1953) 1 एससीसी 813] में इस न्यायालय ने विदेशी देशों तथा प्रिवी काउंसिल के विभिन्न निर्णयों का उल्लेख करने के बाद कहा:*

यह जनता के लिए हानिकारक होगा यदि इससे लोगों के मन में न्यायाधीश की ईमानदारी, क्षमता या निष्पक्षता के संबंध में आशंका उत्पन्न होती है, या वास्तविक और भावी वादकारियों को न्यायालय के न्याय प्रशासन पर पूर्ण विश्वास रखने से रोका जाता है, या यदि यह स्वयं न्यायाधीश के मन में उनके न्यायिक कर्तव्यों के निर्वहन में संकोच उत्पन्न करने की संभावना रखता है। यह सुव्यवस्थित है कि यह सकारात्मक रूप से सिद्ध करना आवश्यक नहीं है कि ऐसे मानहानिकारक वक्तव्य के कारण न्याय के प्रशासन में वास्तविक हस्तक्षेप हुआ है; इतना पर्याप्त है यदि वह किसी भी प्रकार से न्याय के विधिसम्मत प्रशासन में हस्तक्षेप करने की संभावना रखता है।'

25. *यह ध्यान देने योग्य है कि एस. मुलगांवकर मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया:*

16. 'न्यायपालिका आलोचना से मुक्त नहीं हो सकती। किन्तु जब वह आलोचना स्पष्ट विकृति या गंभीर मिथ्या प्रस्तुति पर आधारित हो और इस प्रकार की जाए कि न्यायपालिका के प्रति सम्मान को कम करने और

जनता के विश्वास को नष्ट करने के लिए अभिप्रेत लगे, तो उसे अनदेखा नहीं किया जा सकता।'

26. *यद्यपि न्यायाधीश के विरुद्ध कुछ आरोप केवल उस व्यक्ति के विरुद्ध मानहानि हो सकते हैं, किन्तु कभी-कभी वे अवमानना भी बन सकते हैं, आरोपों की गंभीरता पर निर्भर करते हुए। ब्रह्म प्रकाश शर्मा मामले में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि:*

"[क] न्यायाधीश पर मानहानिकारक आक्रमण न्यायाधीश के संबंध में मानहानि हो सकता है और यह उसके लिए खुला है कि वह मानहानिकारक के विरुद्ध उचित कार्यवाही करे यदि वह चाहे। किन्तु यदि अपमानजनक वक्तव्य का प्रकाशन न्याय के विधिसम्मत प्रवाह या विधि के प्रशासन में हस्तक्षेप करने के लिए अभिप्रेत है, तो उसे संक्षेप में अवमानना के रूप में दंडित किया जा सकता है।'

यही दृष्टिकोण पर्सपेक्टिव पब्लिकेशन्स (प्रा.) लि. बनाम महाराष्ट्र राज्य और सी.के. दफ्तरी बनाम ओ.पी. गुप्ता में अपनाया गया। अतः, इस तथ्य से परे कि कोई वक्तव्य मानहानिकारक है, वह आपराधिक अवमानना भी बन सकता है यदि आरोप ऐसा है कि वह न्यायालय के अधिकार को कम करने में सक्षम है। ऐसे वक्तव्य की गंभीरता यह है कि वह न्यायालय को कलंकित करेगा।

27. *'न्यायालय के किसी मत की आलोचना करने का अधिकार, उसके विधिक प्रतिपादन के निष्कर्षों पर विवाद करने का अधिकार, या तथ्यों की उसकी अवधारणा पर प्रश्न उठाने का अधिकार, जब तक ऐसी आलोचना निष्पक्ष रूप से की जाती है, सामान्यतः शालीन और सम्मानजनक भाषा में होती है और न्यायालय की स्थिति को जानबूझकर या दुर्भावनापूर्वक गलत प्रस्तुत करने के लिए अभिप्रेत नहीं होती, अथवा उसे बदनाम करने या उसके अधिकार के प्रति अपेक्षित सम्मान को कम करने की प्रवृत्ति नहीं रखती, तब तक उसे प्रश्नांकित नहीं किया जा सकता। ... स्वतंत्र वाणी*

का अधिकार एक स्वतंत्र देश में स्वतंत्रता की सबसे बड़ी गारंटी है, यद्यपि वह अधिकार अक्सर और अनेक अवसरों पर घोर दुरुपयोग किया जाता है। ...

यदि किसी समुदाय का कोई महत्वपूर्ण हिस्सा यह मानने लगे कि, चाहे विधि की घोर अज्ञानता के कारण या किसी और बुरे कारण से, वह न्यायालयों पर भरोसा नहीं कर सकता कि वे अपराध के आरोपित व्यक्ति को न्याय देंगे, तो वह समुदाय किसी अवसर पर इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि न्यायालयों के अपने कर्तव्य में विफल होने की संभावना पर भरोसा करना उचित नहीं है।'

[एड. जैसा कि पीटर ब्रीन, रे, 17 लॉयर्स रिपोर्ट्स एनोटेटेड, न्यू सीरीज़, पृ. 572 में कहा गया है और सी.के. दफ्तरी बनाम ओ.पी. गुप्ता में उद्धृत किया गया है।]

***28.** न्यायपालिका लोकतंत्र की आधारशिला और सहायक है। यदि लोग न्यायालय द्वारा प्रदत्त न्याय में विश्वास खो दें, तो संपूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्था ढह जाएगी। इस पृष्ठभूमि में लॉर्ड डेनिंग, एम.आर. के मेट्रोपॉलिटन प्रॉपर्टीज लि. बनाम लैनन में दिए गए अभिप्राय प्रासंगिक हैं:*

"न्याय विश्वास में निहित होना चाहिए; और विश्वास तब नष्ट हो जाता है जब विवेकशील लोग यह सोचकर चले जाते हैं: 'न्यायाधीश पक्षपाती था।"

44. हाल ही में ***विकिमीडिया फाउंडेशन इंक. बनाम एएनआई मीडिया प्राइवेट लिमिटेड व अन्य,*** (2025) 10 एससीसी 353 में, सर्वोच्च न्यायालय ने खुले न्यायालयों के महत्व और न्यायालय के इस कर्तव्य पर बल देते हुए कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अंतर्गत मौलिक अधिकार को बनाए रखे, यद्यपि बोले गए या लिखे गए शब्द उन्हें पसंद न आएँ, यह अभिप्राय व्यक्त किया कि यदि जनता का कोई सदस्य, कोई वादकारी, अथवा

मीडिया भी व्यापक निराधार कलंक लगाकर न्यायालय या न्यायाधीशों को कलंकित करने का प्रयास करता है या उन न्यायाधीशों पर उद्देश्यों का आरोप लगाकर जिन्होंने कोई न्यायिक आदेश पारित किया है या न्यायालय की कार्यवाही संचालित की है, तो निश्चय ही न्यायालय ऐसे अवमाननाकर्ताओं के विरुद्ध आपराधिक अवमानना की कार्यवाही प्रारंभ करने के लिए उचित रूप से न्यायसंगत होगा। आगे यह भी कहा गया कि किसी भी प्रणाली, जिसमें न्यायपालिका भी सम्मिलित है, के सुधार के लिए आत्मावलोकन ही कुंजी है, जो केवल तभी संभव है जब न्यायालय के समक्ष भी मुद्दों पर सशक्त बहस हो, और ऐसी बहस तथा रचनात्मक आलोचना का स्वागत किया जाना चाहिए। किन्तु आलोचना करने वालों को यह स्मरण रखना चाहिए कि न्यायाधीश ऐसी आलोचना का उत्तर नहीं दे सकते और यदि कोई प्रकाशन न्यायालय या न्यायाधीशों को कलंकित करता है, तो न्यायालय को कार्रवाई करनी चाहिए।

45. ***आंद्रे पॉल टेरेंस एम्बार्ड*** (पूर्वोक्त) में लॉर्ड एटकिन ने भी यह बल दिया कि न्यायासन में किए गए सार्वजनिक कार्य की निष्पक्ष आलोचना करने का सामान्य अधिकार प्रयोग करने वाला कोई भी व्यक्ति, चाहे निजी रूप से या सार्वजनिक रूप से, कोई अपराध नहीं करता। यह भी बल दिया गया कि आलोचना का मार्ग सार्वजनिक मार्ग है और गलत सोच वाले भी उसमें त्रुटि करने की अनुमति रखते हैं, बशर्ते कि जनता के सदस्य न्याय के प्रशासन में भाग लेने वालों को अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाने से बचें और वे वास्तव

में आलोचना के अधिकार का प्रयोग कर रहे हों, दुर्भावना से कार्य नहीं कर रहे हों या न्याय के प्रशासन को कमजोर करने का प्रयास नहीं कर रहे हों।

46. ***टी.सी. गुप्ता*** *(पूर्वोक्त)* में सर्वोच्च न्यायालय ने बल दिया कि अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति का प्रयोग अत्यधिक सावधानी और सतर्कता के साथ किया जाना चाहिए और केवल वहीं जहाँ 'मौन अब विकल्प नहीं रह गया है।'

47. ***निर्भय सिंह सुलिया*** (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय ने बल दिया कि अवमानना अधिकार-क्षेत्र का प्रयोग करते समय अत्यधिक सावधानी और विवेक दिखाना चाहिए, और निष्पक्ष आलोचना, जो वास्तविक जनहित में हो, तथा प्रेरित आलोचना और आक्रमण, जो निराधार हो और इसलिए जनहित के विरुद्ध हो, के बीच संतुलन स्थापित करना चाहिए। जनहित यह भी है कि जिला न्यायपालिका को प्रेरित आलोचना और आक्रमण से संरक्षित किया जाए।

48. उपरोक्त सिद्धांतों को वर्तमान मामलों के तथ्यों पर लागू करते हुए, प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा न्यायालय की कार्यवाही की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग कराने और उसके संबंध में बहस उत्पन्न करने का अभियान अवमानना नहीं कहा जा सकता। इस संबंध में, भले ही वह उन मामलों को उजागर करे जहाँ, उसके अनुसार, न्यायिक कार्यवाही की ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का महत्वपूर्ण प्रभाव होता, यह अवमानना नहीं होगी, बल्कि न्यायिक प्रणाली को और सुदृढ़ करने हेतु 'खुले न्यायालय' की अवधारणा को ध्यान में रखते हुए स्वस्थ बहस

उत्पन्न करने का उद्देश्य होगा, जैसा कि ***विकिमीडिया फाउंडेशन इंक.*** (पूर्वोक्त) में बल दिया गया।

49. न्यायिक प्रणाली की समग्र बुराइयों पर प्रत्यर्थी संख्या 2 की सामान्य टिप्पणियाँ भी हमें उसके विरुद्ध अवमानना अधिकार-क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए प्रेरित नहीं करतीं और हम उन्हें जाने देते, संभवतः निष्पक्ष आलोचना के रूप में या ऐसे व्यक्ति के क्रोध के विसर्जन के रूप में जिसने यह महसूस किया कि उसे वह न्याय नहीं मिला जिसका वह हकदार था या उसे लगा कि न्याय में विलंब हुआ। हमें स्मरण रखना चाहिए कि किसी न किसी पक्षकार को न्यायालय द्वारा पारित आदेश से असंतोष हो सकता है और कभी-कभी वह अपनी निराशा को अनुचित टिप्पणियों के माध्यम से व्यक्त कर सकता है; इन्हें हमें सहजता से लेना चाहिए और अत्यधिक संवेदनशीलता से नहीं। तथापि, वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी संख्या 2 ने स्वयं को इस बहस तक सीमित नहीं रखा और न ही उसका क्रोध का विसर्जन निष्पक्ष आलोचना के रूप में है। उसने तीन न्यायिक अधिकारियों पर व्यक्तिगत आक्रमण किया और यहाँ तक आरोप लगाया कि यदि किसी वादकारी का मामला उनके समक्ष सूचीबद्ध होता है, तो ऐसे वादकारी को न्याय की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। ऐसी व्यापक टिप्पणियों का आधार क्या है? हमारी बार-बार की गई पूछताछ पर भी प्रत्यर्थी संख्या 2 इन व्यापक कथनों को केवल प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा इन अवमानना संदर्भों में दिए गए साक्षात्कारों के आधार पर उचित ठहराता है। जब यह पूछा गया कि क्या प्रत्यर्थी संख्या 2 ने उन मामलों के तथ्यों को, जिनकी चर्चा साक्षात्कारों में

की गई थी, न्यायिक अभिलेख से सत्यापित किया था, तो प्रत्यर्थी संख्या 2 का उत्तर नकारात्मक रहा। जबकि प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दिए गए साक्षात्कार इस आधार पर थे कि यदि उन मामलों की कार्यवाही रिकॉर्ड की जाती, तो परिणाम भिन्न हो सकता था, प्रत्यर्थी संख्या 2 ने उसे इस रूप में प्रस्तुत किया कि ये न्यायिक अधिकारी स्वयं न्याय नहीं कर रहे थे और उनके समक्ष कोई भी वादकारी न्याय की अपेक्षा नहीं कर सकता। अतः प्रत्यर्थी संख्या 2 का उद्देश्य स्पष्ट रूप से केवल इन न्यायिक अधिकारियों को जनता में कलंकित करना और उनकी छवि को गिराना है, जिससे न्यायालय का अधिकार कम हो। यह स्वस्थ बहस उत्पन्न करने का उद्देश्य नहीं है बल्कि न्यायालय को कलंकित करने का है। यह *सद्भावनापूर्ण* नहीं बल्कि *दुर्भावनापूर्ण* है, न्यायिक प्रणाली को बदनाम करने और न्यायालयों के अधिकार को कम करने के लिए।

50. यदि किसी न्यायिक अधिकारी पर उसकी ईमानदारी या क्षमता पर आक्रमण करना हो, तो उसे ठोस साक्ष्य के साथ किया जाना चाहिए; इसे हल्के में नहीं किया जा सकता। हमें स्मरण रखना चाहिए कि ऐसा आक्रमण, यदि बिना किसी आधार के किया जाए, तो न्यायिक अधिकारी के अधिकार को कमजोर करता है और उसके द्वारा निर्भीक एवं निष्पक्ष रूप से न्याय प्रदान करने में हस्तक्षेप करता है। ऐसी आलोचना इसलिए ठोस आधार पर होनी चाहिए, विशेषकर क्योंकि न्यायिक अधिकारी, शिकायतकर्ता के विपरीत, सार्वजनिक रूप से अपने कार्यों को उचित ठहराने का कोई साधन नहीं रखते। जब कोई न्यायिक अधिकारी न्याय प्रदान करता है, तो उससे गलतियाँ होना

स्वाभाविक है; कोई भी न्यायिक अधिकारी सदैव 100% सही होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। इसी कारण हमारे पास न्यायालयों की एक श्रेणीबद्ध व्यवस्था है, जहाँ कोई वादकारी उच्च न्यायालय का दरवाज़ा खटखटा सकता है यदि वह निर्णय से असंतुष्ट है। इस उपाय में, आदेश निरस्त किया जा सकता है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि मूल आदेश पारित करने वाला न्यायिक अधिकारी ईमानदारी से कार्य नहीं कर रहा था या वह अक्षम था। वर्तमान मामले में तो यह अवस्था भी नहीं आई थी। प्रत्यर्थी संख्या 2 ने संबंधित न्यायिक अधिकारियों के विरुद्ध बिना किसी आधार के अपना निर्णय सुनाया और इस प्रकार उनके अधिकार को कमजोर किया। यह उसके द्वारा की गई आपराधिक अवमानना का एक क्लासिक उदाहरण है।

51. *अव.वा.(आप.) 4/2025* में, प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा 07.03.2025 को अपलोड किए गए यूट्यूब वीडियो का बैनर और परिचय, यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय को लक्षित था, वस्तुतः संपूर्ण न्यायिक प्रणाली की गरिमा को कम करने के लिए था। यह केवल सर्वोच्च न्यायालय के विरुद्ध अपमानजनक शब्दों का प्रयोग नहीं था, बल्कि संपूर्ण न्यायिक प्रणाली के विरुद्ध था। इसका उद्देश्य प्रणाली का उपहास करना, उसे बदनाम करना और उसकी गरिमा एवं अधिकार को कम करना था। यह सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों/निर्णयों की आलोचना नहीं थी, बल्कि संपूर्ण न्यायिक प्रणाली की आलोचना थी। हमारे विचार में यह न्यायालय की आपराधिक अवमानना है, जो

क्षम्य नहीं है और जिसके लिए प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध कठोर कार्रवाई आवश्यक है।

52. प्रत्यर्थी संख्या 2 का यह अभिकथन कि वह *सद्भावनापूर्ण* कार्य कर रहा था या उसका न्यायालय की गरिमा को कम करने का कोई इरादा नहीं था, स्वीकार नहीं किया जा सकता। उसके द्वारा किए गए कार्य स्वयं बोलते हैं और यह *स्वः प्रमाण* का मामला है। इसके लिए कोई औचित्य नहीं हो सकता। यह निश्चित रूप से भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(क) के अंतर्गत सुरक्षित नहीं है।

53. प्रत्यर्थी संख्या 2 का यह प्रस्तुतिकरण कि उसके विरुद्ध आरोप स्पष्ट नहीं हैं, टिकाऊ नहीं है। आरोप स्पष्ट और विशिष्ट हैं और प्रत्यर्थी संख्या 2 के उत्तर से यह स्पष्ट है कि वह उन्हें पूरी तरह समझता है।

54. अतः हम पाते हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 2 ने *न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971* की धारा 2(ग) में परिभाषित न्यायालय की आपराधिक अवमानना की है।

55. उन्हें अधिनियम की धारा 12 के अंतर्गत दी जाने वाली सजा पर प्रस्तुतीकरण करने का अवसर देने हेतु, हम उसे *न्यायालय अवमानना (दिल्ली उच्च न्यायालय) नियम, 2025* के नियम 13(1) के अंतर्गत नोटिस देते हैं। वह दो सप्ताह की अवधि में दंड पर अपना प्रस्तुतिकरण दायर कर सकता है।

56. चूँकि हमने प्रत्यर्थी संख्या 1, अर्थात् श्री शिव नारायण शर्मा और श्री दीपक सिंह द्वारा दी गई क्षमा याचना स्वीकार कर ली है, उन्हें उनके संबंधित अवमानना मामलों से उन्मुक्त किया जाता है।

57. मामले को दिनांक 12 मई, 2026 को सूचीबद्ध किया जाए, जब प्रत्यर्थी संख्या 2 व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहेगा।

58. इस निर्णय की हिंदी में अनूदित प्रति प्रत्यर्थी संख्या 2 को रजिस्ट्री द्वारा उपलब्ध कराई जाए।

59. इस निर्णय की एक प्रति कोर्ट मास्टर के हस्ताक्षर अधीन *दस्ती* दी जाए।

न्या. नवीन चावला

न्या. रविंद्र डुडेजा

21 अप्रैल, 2026/*आरवी/एसजी/एएस*

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*